विशेष अध्ययन हेतु : कनुप्रिया

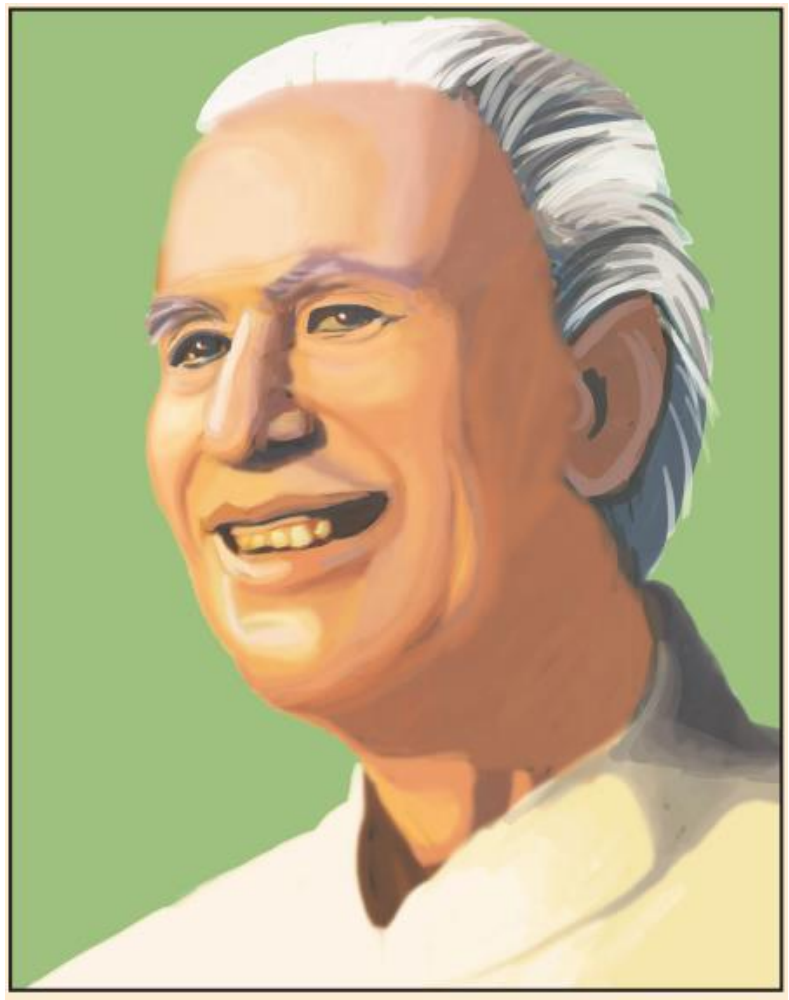

लेखक परिचय : डॉ. धर्मवीर भारती जी का जन्म २५ दिसंबर १९२६ को उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद में हुआ । आपने इलाहाबाद में ही बी.ए. तथा एम.ए. (हिंदी साहित्य) किया । आपने आचार्य धीरेंद्र वर्मा के निर्देशन में 'सिद्ध साहित्य' पर शोध प्रबंध लिखा । यह शोध प्रबंध हिंदी साहित्य अनुसंधान के इतिहास में विशेष स्थान रखता है । आपने १९५९ तक अध्यापन कार्य किया । पत्रकारिता की ओर झुकाव होने के कारण भारती जी ने मुंबई से प्रकाशित होने वाले टाइम्स ऑफ इंडिया पब्लिकेशन के प्रकाशन 'धर्मयुग' का संपादन कार्य वर्षों तक किया । भारती जी की मृत्यु ४ सितंबर १९९७ को हुई ।

प्रमुख कृतियाँ : 'गुनाहों का देवता', 'सूरज का सातवाँ घोड़ा' (उपन्यास), 'सात गीत वर्ष', 'ठंडा लोहा', 'कनुप्रिया' (कविता संग्रह), 'मुर्दों का गाँव', 'चाँद और टूटे हुए लोग', 'आस्कर वाइल्ड की कहानियाँ', 'बंद गली का आखिरी मकान' (कहानी संग्रह), 'नदी प्यासी थी' (एकांकी), 'अंधा युग', 'सृष्टि का आखिरी आदमी' (काव्य नाटक), 'सिद्ध साहित्य' (साहित्यिक समीक्षा), 'एक समीक्षा', 'मानव मूल्य और साहित्य', 'कहानी-अकहानी', 'पश्यंती' (निबंध) आदि ।

सेतु : मैं

नीचे की घाटी से
ऊपर के शिखरों पर
जिसको जाना था वह चला गया–
हाय मुझी पर पग रख
मेरी बाँहों से
इतिहास तुम्हें ले गया !

राधा कहती है, "हे कनु (कृष्ण) नीचे की घाटी से ऊपर के शिखरों पर जिसे जाना था, वह चला गया। (लेकिन बलि मेरी ही चढ़ी) मेरे ही सिर पर पैर रख मेरी बाहों से इतिहास तुम्हें ले गया।"

सुनो कनु, सुनो
क्या मैं सिर्फ एक सेतु थी तुम्हारे लिए
लीलाभूमि और युद्धक्षेत्र के
अलंघ्य अंतराल में !

हे कनु, इस लीला क्षेत्र से उठकर युद्ध क्षेत्र तक की अलंघ्य दूरी तय करने के लिए क्या तुमने मुझे ही सेतु बना दिया?

अब इन सूने शिखरों, मृत्यु घाटियों में बने
सोने के पतले गुँथे तारोंवाले पुल-सा
निर्जन
निरर्थक
काँपता-सा, यहाँ छूट गया-मेरा यह सेतु जिस्म
-जिसको जाना था वह चला गया

अब इन शिखरों और मृत्यु-घाटियों के बीच बने इस सोने के पतले और गुँथे हुए तारों से बने पुल की तरह मेरा यह सेतु-रूपी शरीर काँपता हुआ निर्जन और निरर्थक रह गया है।

जिसे जाना था वह चला गया।

अमंगल छाया

घाट से आते हुए
कदंब के नीचे खड़े कनु को
ध्यानमग्न देवता समझ, प्रणाम करने
जिस राह से तू लौटती थी बावरी
आज उस राह से न लौट

अवचेतन मन में बैठी हुई राधा अपने चेतन मन वाली राधा को संबोधित करते हुए कहती है, हे राधा! यमुना के घाट से ऊपर आते समय कदंब के पेड़ के नीचे खड़े कनु को देवता समझकर प्रणाम करने के लिए तुम जिस मार्ग से लौटती थी, हे बावरी! आज तुम उस मार्ग से होकर मत लौटना।

उजड़े हुए कुंज
रौंदी हुई लताएँ
आकाश पर छाई हुई धूल
क्या तुझे यह नहीं बता रही
कि आज उस राह से
कृष्ण की अठारह अक्षौहिणी सेनाएँ
युद्ध में भाग लेने जा रही हैं !

ये उजड़े हुए कुंज, रौंदी हुई लताएँ, आकाश में छाई हुई धूल, क्या तुम्हें यह आभास नहीं दे रहे हैं कि आज उस मार्ग से कृष्ण की अठारह अक्षौहिणी सेनाएँ युद्ध में भाग लेने जा रही हैं!

आज उस पथ से अलग हटकर खड़ी हो
बावरी !
लताकुंज की ओट
छिपा ले अपने आहत प्यार को
आज इस गाँव से
द्वारिका की युद्धोन्मत्त सेनाएँ गुजर रही हैं

हे बावरी! आज तू उस मार्ग से दूर हटकर खड़ी हो जा। लताकुंज की ओट में अपने घायल प्यार को छुपा ले। क्योंकि आज इस गाँव से द्वारिका की उन्मत्त सेनाएँ युद्ध के लिए जा रही हैं।

मान लिया कि कनु तेरा
सर्वाधिक अपना है
मान लिया कि तू
उसके रोम–रोम से परिचित है
मान लिया कि ये अगणित सैनिक
एक–एक उसके हैं :
पर जान रख कि ये तुझे बिलकुल नहीं जानते
पथ से हट जा बावरी

हे राधा! मैं मानती हूँ कि कन्हैया सबसे अधिक तुम्हारा अपना है। मैं मानती हूँ कि तुम कृष्ण के रोम-रोम से परिचित हो। मैं मानती हूँ कि ये असंख्य सैनिक तुम्हारे उसके (कन्हैया के) हैं, पर तू यह जान ले कि ये सैनिक तुझे बिलकुल नहीं पहचानते हैं। इसलिए हे बावरी! इस मार्ग से दूर हट जा।

यह आम्रवृक्ष की डाल
उनकी विशेष प्रिय थी
तेरे न आने पर
सारी शाम इसपर टिक
उन्होंने वंशी में बार-बार
तेरा नाम भरकर तुझे टेरा था-

यह आम की डाल तुम्हारे कन्हैया की अत्यंत प्रिय थी। जब तक तू (यहाँ) नहीं आती थी, सारी शाम कन्हैया इस डाल पर टिककर बंशी में तेरा नाम भर-भरकर तुम्हें टेरा करता था।

आज यह आम की डाल
सदा–सदा के लिए काट दी जाएगी
क्योंकि कृष्ण के सेनापतियों के
वायुवेगगामी रथों की
गगनचुंबी ध्वजाओं में
यह नीची डाल अटकती है
और यह पथ के किनारे खड़ा
छायादार पावन अशोक वृक्ष
आज खंड–खंड हो जाएगा तो क्या–
यदि ग्रामवासी, सेनाओं के स्वागत में
तोरण नहीं सजाते
तो क्या सारा ग्राम नहीं उजाड़ दिया जाएगा?

आज यह आम की डाल सदा-सदा के लिए काट दी जाएगी। इसका कारण यह है कि कृष्ण के सेनापतियों के तेज गति वाले रथों की ऊँची-ऊँची पताकाओं में यह डाल उलझती है...अटकती है। इतना ही नहीं, रास्ते के किनारे यह छायादार पवित्र अशोक का पेड़ भी आज टुकड़े-टुकड़े कर दिया जा सकता है। अगर इस गाँव के लोग सेनाओं के स्वागत में (इस वृक्ष की पत्तियों के) तोरण नहीं बनाएँगे, तो शायद यह गाँव उजाड़ दिया जाएगा।

दुख क्यों करती है पगली
क्या हुआ जो
कनु के ये वर्तमान अपने,
तेरे उन तन्मय क्षणों की कथा से
अनभिज्ञ हैं
उदास क्यों होती है नासमझ
कि इस भीड़–भाड़ में
तू और तेरा प्यार नितांत अपरिचित

अरे पगली! दुखी क्यों होती है। क्या हुआ, यदि आज के कृष्ण तुम्हारे साथ पहले बिताए हुए तन्मयता के गहरे क्षणों को भूल चुक हैं।

हे राधे! तू उदास क्यों होती है कि इस भीड़भाड़ में तुम्हें और तुम्हारे प्यार को पहचानने वाला कोई नहीं है।

छूट गए हैं,

गर्व कर बावरी !

कौन है जिसके महान प्रिय की

अठारह अक्षौहिणी सेनाएँ हों ?

राधे, तुम्हें तो गर्व होना चाहिए। क्योंकि किसके महान प्रेमी के पास अठारह अक्षौहिणी सेनाएँ हैं। (केवल तुम्हारे ही प्रेमी के पास न!)

एक प्रश्न

अच्छा, मेरे महान कनु,
मान लो कि क्षण भर को
मैं यह स्वीकार लूँ
कि मेरे ये सारे तन्मयता के गहरे क्षण
सिर्फ भावावेश थे,
सुकोमल कल्पनाएँ थीं
रँगे हुए, अर्थहीन, आकर्षक शब्द थे–

राधा अपने कनु (कृष्ण) को संबोधित करते हुए कहती है कि मेरे महान कनु, मान लो... क्षणभर के लिए मैं इस बात को स्वीकार कर लूँ कि मेरे वे तन्मयता वाले सारे गहरे क्षण केवल मेरे भावावेश थे... मेरी कोमल कल्पनाएँ थीं... केवल बनावटी, निरर्थक और आकर्षक शब्द थे।

मान लो कि
क्षण भर को
मैं यह स्वीकार लूँ
कि
पाप–पुण्य, धर्माधर्म, न्याय–दंड
क्षमा–शीलवाला यह तुम्हारा युद्ध सत्य है–

मान लो, एक क्षण के लिए मैं यह स्वीकार कर लूँ कि तुम्हारा महाभारत का यह युद्ध पाप-पुण्य, धर्म-अधर्म, न्याय-दंड तथा क्षमा-शील वाला है। इसलिए इस युद्ध का होना इस युग की सच्चाई है।

तो भी मैं क्या करूँ कनु,
मैं तो वही हूँ
तुम्हारी बावरी मित्र
जिसे सदा उतना ही ज्ञान मिला
जितना तुमने उसे दिया

जितना तुमने मुझे दिया है अभी तक
उसे पूरा समेटकर भी
आस-पास जाने कितना है तुम्हारे इतिहास का
जिसका कुछ अर्थ मुझे समझ नहीं आता है !

फिर भी कनु, मैं क्या करूँ? मैं तो वही तुम्हारी बावरी मित्र हूँ। मुझे तो केवल उतना ही ज्ञान मिला है, जितना तुमने मुझे दिया है। तुम्हारे दिए हुए समस्त ज्ञान को समेट कर भी मैं तुम्हारे इतिहास, तुम्हारे उदात्त और महान कार्यों को समझ नहीं पाई हूँ।

अपनी जमुना में
जहाँ घंटों अपने को निहारा करती थी मैं
वहाँ अब शस्त्रों से लदी हुई
अगणित नौकाओं की पंक्ति रोज–रोज कहाँ जाती है?
धारा में बह–बहकर आते हुए टूटे रथ
जर्जर पताकाएँ किसकी हैं?

कनु, अपनी यमुना नदी, जिसमें मैं अपने आप को घंटों निहारा करती थी, अब उसमें हथियारों से लदी हुई असंख्य नौकाएँ रोज-रोज न जाने कहाँ जाती हैं? नदी की धारा में बह-बह कर आने वाले टूटे हुए रथ और फटी हुई पताकाएँ किसकी हैं?

हारी हुई सेनाएँ, जीती हुई सेनाएँ
नभ को कँपाते हुए युद्ध घोष, क्रंदन-स्वर,
भागे हुए सैनिकों से सुनी हुई
अकल्पनीय अमानुषिक घटनाएँ युद्ध की
क्या ये सब सार्थक हैं?
चारों दिशाओं से
उत्तर को उड़-उड़कर जाते हुए
गृद्धों को क्या तुम बुलाते हो

हे कनु, युद्ध क्षेत्र से हारी हुई सेनाएँ, जीती हुई सेनाएँ, गगनभेदी युद्ध घोष, विलाप के स्वर और युद्ध क्षेत्र से भागे हुए सैनिकों के मुँह से सुनी हुई युद्ध की अकल्पनीय और अमानवीय घटनाएँ, ... क्या यह सब सार्थक है? गिद्ध जो चारों दिशाओं से उड़-उड़ कर उत्तर दिशा की ओर जा रहे हैं, हे कनु, क्या इन्हें तुम बुलाते हो? (जैसे तुम भटकी हुई गायों को बुलाते थे।)

जितनी समझ तुमसे अब तक पाई है कनु,
उतनी बटोरकर भी
कितना कुछ है जिसका
कोई भी अर्थ मुझे समझ नहीं आता है

हे कनु, मैंने अब तक तुमसे जितनी समझ पाई है, उस समझ को बटोर कर भी मैं यह जान पाई हूँ कि और भी बहुत कुछ है तुम्हारे पास, जिसका कोई भी अर्थ मेरी समझ में नहीं आता।

अर्जुन की तरह कभी
मुझे भी समझा दो
सार्थकता है क्या बंधु?
मान लो कि मेरी तन्मयता के गहरे क्षण
रँगे हुए, अर्थहीन, आकर्षक शब्द थे–
तो सार्थक फिर क्या है कनु?
पर इस सार्थकता को तुम मुझे
कैसे समझाओगे कनु?

हे कनु, जिस तरह तुमने युद्ध क्षेत्र में अर्जुन को युद्ध का प्रयोजन और उसकी सार्थकता समझाई थी, वैसे मुझे भी समझा दो कि सार्थकता क्या है? राधा कहती है कि मान लो कि मेरी तन्मयता के गहरे क्षण रंगे हुए, अर्थहीन परंतु आकर्षक शब्द थे, तो तुम्हारी दृष्टि से सार्थक क्या है? इस सार्थकता को तुम मुझे कैसे समझाओगे?

शब्द : अर्थहीन

शब्द, शब्द, शब्द, ...
मेरे लिए सब अर्थहीन हैं
यदि वे मेरे पास बैठकर
तुम्हारे काँपते अधरों से नहीं निकलते
शब्द, शब्द, शब्द, ...
कर्म, स्वधर्म, निर्णय, दायित्व.....
मैंने भी गली–गली सुने हैं ये शब्द
अर्जुन ने इनमें चाहे कुछ भी पाया हो
मैं इन्हें सुनकर कुछ भी नहीं पाती प्रिय,
सिर्फ राह में ठिठककर
तुम्हारे उन अधरों की कल्पना करती हूँ
जिनसे तुमने ये शब्द पहली बार कहे होंगे

...शब्द, शब्द, शब्द! राधा कहती है, मेरे लिए इन शब्दों की कोई कीमत नहीं है। हे कनु, जो शब्द मेरे पास बैठकर तुम्हारे काँपते हुए होठों से नहीं निकलते वे सभी शब्द मेरे लिए अर्थहीन हैं, निरर्थक हैं। वह कहती हैं कि कर्म, स्वधर्म, निर्णय और दायित्व जैसे शब्द मैंने भी गली-गली में सुने हैं। अर्जुन ने इन शब्दों में भले ही कुछ पाया हो, हे कनु! इन शब्दों को सुनकर मैं कुछ भी नहीं पायी। मैं रास्ते में ठहरकर तुम्हारे उन होठों की कल्पना करती हूँ जिन होठों से तुमने प्रणय के शब्द पहली बार कहे होंगे।

मैं कल्पना करती हूँ कि
अर्जुन की जगह मैं हूँ
और मेरे मन में मोह उत्पन्न हो गया है
और मैं नहीं जानती कि युद्ध कौन–सा है
और मैं किसके पक्ष में हूँ
और समस्या क्या है
और लड़ाई किस बात की है
लेकिन मेरे मन में मोह उत्पन्न हो गया है
क्योंकि तुम्हारे द्वारा समझाया जाना
मुझे बहुत अच्छा लगता है
और सेनाएँ स्तब्ध खड़ी हैं
और इतिहास स्थगित हो गया है
और तुम मुझे समझा रहे हो.....

मैं कल्पना करती हूँ कि अर्जुन की जगह मैं हूँ और मेरे मन में मोह उत्पन्न हो गया है। मुझे कुछ पता नहीं है, युद्ध कौन-सा है और मैं किसके पक्ष में हूँ। मुझे कुछ पता नहीं कि समस्या क्या है और लड़ाई किस बात की है। लेकिन मेरे मन में मोह उत्पन्न हो गया है। क्योंकि तुम्हारा समझाना मुझे बहुत अच्छा लगता है। जब तुम मुझे समझा रहे हो तो सेनाएँ स्तब्ध खड़ी रह गई हैं और इतिहास की गति रुक गई है। और तुम मुझे समझा रहे हो।

कर्म, स्वधर्म, निर्णय, दायित्व,
शब्द, शब्द, शब्द .....
मेरे लिए नितांत अर्थहीन हैं–
मैं इन सबके परे अपलक तुम्हें देख रही हूँ
हर शब्द को अँजुरी बनाकर
बूँद–बूँद तुम्हें पी रही हूँ
और तुम्हारा तेज
मेरे जिस्म के एक–एक मूर्च्छित संवेदन को
धधका रहा है
और तुम्हारे जादू भरे होंठों से
रजनीगंधा के फूलों की तरह टप–टप शब्द झर रहे हैं
एक के बाद एक के बाद एक.....

तुम कर्म, स्वधर्म, निर्णय, दायित्व जैसे जिन शब्दों को कहते हो, ये मेरे लिए बिलकुल अर्थहीन हैं। कनु, मैं इन सबसे हट करके एकटक तुम्हें देख रही हूँ। तुम्हारे प्रत्येक शब्द को अँजुरी बनाकर मैं बूँद-बूँद तुम्हें पी रही हूँ। तुम्हारा तेज, तुम्हारा व्यक्तित्व जैसे मेरे शरीर के एक-एक मूर्छित संवेदन को दहका रहा है। लगता है तुम्हारे जादू भरे होठों से शब्द रजनीगंधा के फूलों की तरह झर रहे हैं – एक के बाद एक।

कर्म, स्वधर्म, निर्णय, दायित्व.....
मुझ तक आते-आते सब बदल गए हैं
मुझे सुन पड़ता है केवल
राधन, राधन, राधन,
शब्द, शब्द, शब्द,
तुम्हारे शब्द अगणित हैं कनु-संख्यातीत
पर उनका अर्थ मात्र एक है-
मैं
मैं
केवल मैं !

फिर उन शब्दों से
मुझी को
इतिहास कैसे समझाओगे कनु ?

कनु कनु, स्वधर्म, निर्णय और दायित्व आदि जो शब्द तुम्हारे मुँह से निकलते हैं, वे शब्द मुझ तक आते-आते बदल जाते हैं। मुझे ये शब्द राधन्, राधन्, राधन् के रूप में सुनाई देते हैं। तुम्हारे द्वारा कहे जाने वाले शब्द असंख्य हैं, उनकी गणना नहीं की जा सकती। पर मेरे लिए उनका अर्थ केवल एक ही है – मैं ... मैं ... केवल मैं।

फिर बताओ कनु, इन शब्दों से तुम मुझे इतिहास कैसे समझाओगे!

THANK YOU FOR WATCHING